आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 4/अंक 3/सितंबर 2024

Received: 31/06/2024; Accepted: 02/09/2024; Published: 26/09/2024

" समकालीन ग़ज़ल साहित्य और किसानों का आत्मसंघर्ष "

- **कृष्ण कुमार**
शोध छात्र
हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविध्यालय , लखनऊ, उत्तर प्रदेश
मोबाइल नंबर: 9918939393
ई- मेल: Krishnalkou@gmail.com

कृष्ण कुमार, **समकालीन ग़ज़ल साहित्य और किसानों का आत्मसंघर्ष**, आखर हिंदी पत्रिका, खंड 4/अंक 3/सितंबर 2024,(189- 195)

शोध सारांश -

मानव जाति के उत्पत्तिकाल से ही मानव और संघर्ष का चोली-दामन का साथ है। मानव सभ्यता का विकास संघर्षों का ही परिणाम है। कृषि संस्कृति विश्व की अत्यंत प्राचीन संस्कृति है और किसान उस संस्कृति का महत्वपूर्ण घटक है। कहने को तो किसान अन्नदाता व देश का भाग्यविधाता है परन्तु आजाद भारत के इस वर्तमान दौर में भी किसान साज़िश का शिकार हो रहा है नौकरशाही व्यवस्था किसान का खून चूस रही है अधिकारी-कर्मचारी किसान का शोषण कर रहें हैं तथा विदेशी कंपनियां किसानों को दिल खोलकर लूट रही हैं। पत्रकार और मीडिया किसान के मुद्दों पर बिल्कुल संवेदनहीन है। नेता और राजनीति भी किसानों के सपनों पर पानी फेर रहें हैं। किसान सपने तो देखता है पर वो कभी पूरे नही होते। आज के आधुनिक युग में उसे अपना घर-परिवार चलाना मुश्किल हो गया है। कभी खाद, कभी बीज, कभी सिंचाई तो कभी बच्चों की पढ़ाई उसको कर्ज के जाल में फंसाते जा रहा हैं और बेबस किसान स्वयं को आधुनिकता की चकाचौंध से विनाश के मुंह में ढकेलता जा रहा है।

मूल शब्द -

किसान, संघर्ष, ग़ज़ल, अन्याय, कर्ज, भूखमरी, मंहगाई, शोषण, आत्महत्या।

प्रस्तावना -

प्रारम्भ से ही संघर्ष मानव की मूल प्रवृति रही है। वह जन्मकाल से ही अपने हितों की सुरक्षा तथा लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निरन्तर संघर्ष करता रहता है। यदि गहराई से देखा जाए तो संघर्ष सर्वव्यापी हैं। टूट्ते नक्षत्र, आकाशीय बिजली, उफनाते हुए समुद्र, उबलते हुए पर्वत, आग उगलती ज्वालामुखी, जलमग्न सरिताएँ, नगरों को ध्वस्त करते हुए भूकम्प, शेर का गाय पर टूट्ना, मकड़ी का मक्खी को जाल में फंसाना,

मनुष्यों का जानवारों को मारकर खाना आदि संघर्ष के ही प्रमाण हैं। यदि मानव जाति के उद्भव एंव विकास पर एक नजर डाली जाए तो निरन्तर मानव ने अपने हितों की सुरक्षा के लिए संघर्ष किया है। संघर्ष विरोधी विचारों, कार्यों अथवा विचारों का परिणाम है। संघर्ष का प्रभाव समाज पर सकारात्मक और नाकारात्मक दोनों पड़ता है। क्योंकि ***समाज गतिहीन नहीं है। उसकी गति आगे की ओर हो सकती है, पीछे की ओर भी। इस समय वह पीछे की ओर है। कारण यह है कि समाज को पीछे ठेलने वाली जिन शक्तियों से प्रेमचंद लड़े थे, उनसे समाज के प्रभावशाली गिरोहों ने समझौता किया है, उन्हें बढ़ावा दिया है। जिन पर इतिहास ने समाज को बदलने की जिम्मेदारी डाली है, वे अगर अपनी जिम्मेदारी नहीं सँभालते तो जो हो रहा है, वह होगा ही। इससे भी बुरे दिन आ सकते हैं।*** [1] वास्तव में संघर्ष का आरंभ अन्याय ही करता है फिर अस्तित्व और सम्मान की रक्षा के लिए संघर्ष युद्ध का रुप ले लेता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। देश की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है। जिनका सीधा सम्बंध खेती और किसानी से है। जिनके जीवन का आधार केवल कृषि है। जिससे वे अपने परिवार का भरण-पोषण करते हैं। हमारे जीवन का आधार अन्न है। जिसके बिना हम जीवित नहीं रह सकते। उस अन्न को किसान ही जी-तोड़ मेहनत करके पैदा करता है। किसान बहुत परिश्रमी और मेहनती होता है। किसान को किसी जाति, धर्म, पंथ या काल विशेष की सीमा में नहीं बांध सकते। वर्तमान समय में किसान विमर्श के माध्यम से किसानों की पीड़ा, दुःख और उनके संघर्ष को समझने की आवश्यकता है क्योंकि औपनिवेशिक समाज में किसान की हालत सबसे दयनीय है। समाज में किसान सबका नरम चारा है। उसका खून चूसने में कोई कसर नहीं छोड़ता। लेखपाल और पटवारी को यदि नज़राना न दे तो जमीन का टुकड़ा मिलना मुश्किल है, वनरक्षक व चौकीदार की ख़ातिरदारी न करे तो चूल्हे की लकड़ी का जुगाड़ न हो, थानेदार और सिपाही तो जैसे दामाद हो अगर इनका आदर सत्कार समय पर न हो तो सारी जिंदगी जेल और अदालत में बीत जाय, बैंक बाबू यदि नाराज़ हो जाय तो फिर दरवाजे से बारात लौटना तय है, बड़े बड़े नौकरशाह अवसर पाते ही बाढ़ और सूखा का राहत बजट ही खा जाते हैं। कोई यह नहीं सोचते कि किसान भी आदमी है, उनके भी बाल बच्चे है, उनकी भी इज्जत आबरू है। धरती और किसान का माँ-बेटे का रिश्ता होता है। क्यों कि किसान धरती पर केवल खेती ही नहीं करता है, बल्कि पशुपालन, वृक्षारोपण और पर्यावरण का संरक्षण भी करता है। सच्चे अर्थों में किसान ही प्रकृति का संरक्षक है। परन्तु यह भी सही है कि समाज में सबसे ज्यादा शोषित और पीड़ित किसान ही रहता है क्योंकि किसान आजीवन कर्ज में डूबा रहता है। ***"किसान कर्ज में पैदा होता है, कर्ज में ही जीता है, कर्ज़ में ही मर जाता है और कर्ज़ ही विरासत में छोड़ जाता है, यह बात जितनी आज से सौ साल पहले सच थी, उतनी ही सच आज भी है।"*** [2] किसान ही सदैव शोषण की चक्की में पिसता है। यह कितना दुर्भाग्यपूर्ण है कि जिसकी मेहनत से पूरे देश का पेट भरता है, वही किसान स्वयं अभावग्रस्त होकर मरता है।

हिन्दी साहित्य में कृषक समाज के दर्द पर केन्द्रित अनेक कालजयी और प्रसिद्ध रचनाएँ प्राप्त होती हैं। प्रसिद्ध कवियों, कहानीकारों, उपन्यासकारों, नाटककारों तथा निबन्धकारों ने किसान के जीवन पर रचनाएँ

लिखी हैं। भक्तिकाल में तुलसीदास ने किसान की दयनीय दशा का चित्रण कवितावली में किया तो आधुनिक काल में उसी दशा का चित्रण मुंशी प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास और कहानियों में किया है। मुंशी प्रेमचन्द का प्रसिद्ध उपन्यास 'गोदान' तो किसान जीवन का महाकाव्य है।

शोध का विस्तार -

ग़ज़ल आधुनिक हिंदी साहित्य की एक चर्चित विधा है हिंदी ग़ज़ल एक ऐसा रचना काल है जिसमें आधुनिकता, प्रगतिशीलता व यथार्थवाद सबसे अहम मुद्दे हैं। यह कहने में कोई संशय नहीं है कि दुष्यंत कुमार के नेतृत्व ने न केवल ग़ज़ल को उर्दू फ़ारसी की काव्य विधा होने की परिधि से बाहर ही नही निकाला वरन् अपनी अद्भुत संप्रेषण शक्ति और प्रभावोत्पादकता से एहसास कराया कि ग़ज़ल माशूका से बातचीत करने वाली अपनी पारंपरिकता को छोड़कर वह आम लोगों के दुःख दर्द से बातचीत करने वाली लोकप्रिय काव्य विधा बन सकती है। आधुनिक हिंदी ग़ज़ल में भारतीय समाज का ऐसा स्वर विद्यमान है जिसमें सामाजिकता, मानवतावाद, राष्ट्रवाद, प्रकृति-प्रेम, स्त्री-युवा-दलितों का संघर्ष विद्यमान है। आधुनिक हिंदी ग़ज़ल साहित्य में अभिव्यक्त एक प्रमुख स्वर किसानों के संघर्ष का है। जिसमें किसानों की बदहाली पर विस्तार से चर्चा की गई है। कहने को तो किसान देश का अन्नदाता है परन्तु वहीं अन्नदाता जीवन भर कर्ज के बोझ के नीचे दबा रहता है। साहूकार और बैंक अधिकारियों की लगातार प्रताड़ना उसकी आत्मा को धिक्कारती है, उसके जीवित होने को ललकारती है, उन स्थितियों में आत्महत्या के अलावा और कोई उपाय उसे दिखाई नहीं देता। ***"फ़सल को बीमारी से मुक्त करने के लिए जिस कीटनाशक दवाई का प्रयोग किया जाता है, अधिकांश किसान उसे ही पीकर आत्महत्या कर रहे हैं।"***[3]

आज स्वतंत्र भारत में किसान की इस दुर्दशा का प्रमुख जिम्मेदार सरकारी तंत्र है। जिसमें नेता कुर्सी के लिए तो बड़े बड़े वादे करते हैं और जब उनका वोट पाकर सत्ता में पहुंचते हैं तो फिर गिरगिट की तरह रंग बदल लेते हैं और किसान उसी गरीबी, भुखमरी व मजबूरी की आग में जलता रहता है समय-समय पर कुछ किसान नेता उनके हितों के लिए आन्दोलन भी करते हैं परन्तु परिणाम शून्य ही निकलता है-

"कुर्सी के लिए गिरते संभलते हों रहनुमा,

गिरगिट की तरह रंग बदलते हो रहनुमा।

जनता को हक है हाथ में हथियार उठा ले,

जब भुखमरी की धूप में जलते किसान हो।"[4]

हमारे देश में नौकरशाही पूरी तरह से हावी है और नौकरशाह इतना भ्रष्ट हो चुके हैं कि वे अवैध कमाई के अनेक रास्ते अपना रहें हैं यहाँ तक कि किसान को सरकार द्वारा दिए जाने वाले सूखा व बाढ़ की राहत राशि पर भी डाका डाल रहें हैं और लूटी गई धनराशि से ऐश-ओ-आराम के सामान खरीद रहे हैं कुछ

बड़े अधिकारी तो इतने भूखे होते हैं, पेट इतना बड़ा हो जाता है कि सरकार की पूरी योजना की योजना ही खा जाते हैं-

"मिसेज सिन्हा के हाथों में जो बेमौसम खनकते हैं,

पिछली बाढ़ के तोहफे हैं ये कंगन कलाई के।"[5]

किसान की समस्याओं के प्रति सूचना तंत्र शिथिल नज़र आता है। मीडिया उनकी समस्याओं को निष्पक्ष रुप से नही दिखाता, यदि दिखाता भी है तो आंशिक रूप से। कोई संजीदा गुफ्तगूं नही करता। जिससे सरकार द्वारा आग, बाढ़ जैसी गम्भीर समस्याओं में प्राप्त होने वाली राहत राशि से भी वंचित रहना पड़ता है-

"ख़बरों में रेडियो ने गर कुछ कहा नहीं,

ये मत समझ कि देश में कुछ भी हुआ नहीं।

वो कह रहे हैं आग तो लगते ही बुझ गई,

मतलब नहीं कि आग में कोई जला नहीं।"[6]

मंहगाई और भुखमरी किसान की बहुत ही गम्भीर समस्या है। किसान कर्ज चुकाने के लिए फसल कटते ही सस्ते दामों पर अनाज बेच देता है और जमाखोर सस्ते अनाज को खरीद कर बाद में उसी किसान को महंगे दामों पर बेचते हैं। जिससे किसान भूखा रहने के लिए मजबूर हो जाता हैं और उसके बच्चे नमक व सूखी रोटी खाकर दिन भर खेतों पर काम करने को विवश हो जाते हैं-

"पोटली में नमक थोड़ा औ दो सूखी रोटियां,

भोर से ही काम पे निकली हैं देखो बेटियां।"[7]

भ्रष्टाचार, रिश्वत और घूसखोरी तो मानो किसान के लिए अभिशाप है। अधिकारी व कर्मचारी किसान का काम खाली हाथ नही करना चाहते है। पटवारी व लेखपाल महज खसरा-खतौनी के लिए भी मोटी रकम की मांग करते है। झूठी गवाही न देने पर दरोगा व सिपाही झूठे मुकदमे में फंसाने की धमकी देता हैं यहां तक कि अधिकारी छोटे-छोटे कामों के बदले अपना मन बहलाने के लिए गरीब मजदूर व किसानों से अपने साथ कम उम्र की बेटियों को साथ लाने को कहते है-

"नकल खतौनी की मांगो तो बदले में,

घूस चढ़ाने को कहते हैं क्या कह दें।

अधिकारी का मन बहलाने को कमसिन,

लेकर आने को कहते हैं क्या कह दें।"[8]

आज भी गांवों में साहूकार व दबंग व्यक्ति किसानों की जमीन को जबरदस्ती कब्जा कर लेते हैं, और बेचारा किसान नेताओं व असरदार व्यक्तियों के पास दर-दर की ठोकरें खाता रहता है। अस्हाय किसान व मजदूर प्रतिदिन अपमान का घूंट पीने के लिए मजबूर होता है -

"किया खेत पर क़ब्ज़ा जबरन बल,लाठी, बंदूकों से,

इकलौता है खेत कसम से दिलवा भी दो बाबू जी।

जिनके पास बड़ी लाठी है दुनिया क्या बस उसकी है,

हम क्या कुटने-पिटने को है बतला भी दो बाबू जी।"[9]

इन्ही असरदार व्यक्तियों की गणना गाँव के श्रेष्ठ व्यक्तियों में भी की जाती है। जिनकी नीव ही अन्याय व शोषण के खून से लथपथ होती है जिसपर एक विशाल, हवा में लहराता हुआ शानदार मकान खड़ा होता है जिसमें किसानों का शोषक ऐश-ओ-आराम की जिंदगी व्यतीत करता है-

दिखाई देता है जो भेड़िये के होंठों पर,

वो लाल ख़ून हमारी सफेद गाय का है। [10]

किसान-जीवन और बाढ़-सूखा जैसी आपदाओं का तो मानो चोली-दामन का साथ है। जो किसान और मजदूर के जीवन में हर वर्ष त्यौहार की तरह आती है और बुरी तरह प्रभावित करके जाती है। फसल तो नष्ट ही हो जाती है साथ में घर व रोजमर्रा का सामना भी बहा ले जाती है तथा किसान के लिए भुखमरी छोड़ जाती है-

"सुबह का चावल नहीं है, रात का आटा नहीं

किसने ऐसा वक़्त मेरे गाँव में काटा नहीं।"[11]

आज देश के राजनेताओं की नीतियों ने हमारी सभ्यता को एक गम्भीर त्रासदी के मुहाने पर पहुंचा दिया है जिससे किसान का सरकार से मोहभंग हो गया है क्यों कि चुनाव के समय तो वे स्वयं को उनका

परम् हितैषी सिद्ध करने में कोई कसर नहीं छोड़ते परन्तु जीतने के बाद अगले पांच वर्षों तक कोई ख़बर भी नही लेते-

"अभागे गांव को ढांढस बंधाने कौन आयेगा,

इलेक्शन बाद फिर चेहरा दिखाने कौन आयेगा।" [12]

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस मशीनी युग में यह करने में कोई संकोच नहीं है कि हमारे देश ने अतुलनीय विकास किया है। परन्तु जहाँ एक ओर विकास के इस दौर में कारखानों तथा आधुनिक यंत्रों का तीव्रता से विकास हुआ है तो दूसरी ओर हमारे देश की कृषि योग्य भूमि व वनों को उससे कहीं अधिक तीव्रता से नष्ट भी किया गया है। जिससे हमारे देश में भूमिहीन किसानों की तादात लगातार बढती जा रही है और उनका परिवार भुखमरी की कगार पर खड़ा सरकारों का मुंह ताकने को मजबूर है-

अब तो सहरा और समन्दर के लिए हैं बारिशें,

खेतियां जितनी थीं उन पर कारखाने लग गये।" [13]

आज केन्द्रीकरण, भूमण्डलीकरण और बाज़ारवाद के इस दौर में हमारे देश का अन्नदाता किसान विस्थापन के लिए विवश हैं क्योंकि आधुनिक युग की चकाचौंध में उसको अपना घर चलाना मुश्किल हो गया है आवश्यक दैनिक उपयोग की वस्तुएं भी जुटा पाना दूभर हो गया है। अन्ततः वह अपना खेती का कारोबार छोड़ कर दूसरे की नौकरी व मजदूरी करने तथा गांव छोड़कर शहर जाने को मजबूर है-

"फिर किसी बुधिया की काया बे-कफन रक्खी रही,

फिर किसी होरी की बेटी बिक गयी बाजार में।

छोड़ कर घर चल पड़ा हल्कू मजूरी के लिए,

पेट तक भरता नहीं खेती के कारोबार में।" [14]

निष्कर्ष -

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि किसान हमारे भारतीय समाज का आधार स्तंभ है क्योंकि किसान ही उत्पादक वर्ग है परंतु आजादी के बाद भी उसकी समस्याओं और शोषण की स्थितियों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। नई आर्थिक नीति और विश्व बाजार तंत्र से जुड़ने के बाद महंगे बीज, महंगे उर्वरक और महंगे कीटनाशकों के प्रयोग से उत्पादन तो बढ़ा है परंतु इसके विपरीत उत्पादन के न्यूनतम मूल्य से किसान घाटे में जा रहा है और कर्ज के जाल में उलझता जा रहा है जिसका परिणाम है कि अन्नदाता किसान आत्महत्या करने के लिए मजबूर है। मेहनतकश किसान की कमाई पर जमाखोर और दलाल मौज

कर रहे हैं। जमींदारी टूटी लेकिन जमींदार वेश बदलकर आज भी किसानों का शोषण कर रहें है क्योंकि उनके गुर्गे ही आज भी सभापति और सरपंच के रूप में बैठे हैं। पंचायती राज व्यवस्था ने तो गांव को राजनीति के दाव-पेंच में उलझा रखा है। किसान के वास्तविक मुद्दे आज भी हांसिए पर हैं आज उदारीकरण के दौर में एक बार फिर किसानों को बड़ी-बड़ी कंपनियों के हाथ लुटने के लिए छोड़ दिया गया है। ये विदेशी कंपनियां किसानों को झूठे सपने बेचकर खेती व किसान दोनों को तबाह कर रही है। यह सिर्फ किसानों की समस्या नहीं है बल्कि संपूर्ण देश के लिए चिंता का विषय है अतः हम सभी को मिलकर चिंतन करने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ सूची-

1 शर्मा रामविलास, प्रेमचन्द्र और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, अशोक राजपथ पटना (शाखा), पांचवी आवृत्ति 2008, नये संस्करण की भूमिका से

2 राय हरियश, माटी राग, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, 2024, कवर पृष्ठ

3 नवले संजय ,2018 ,दरियागंज नई दिल्ली ,वाणी प्रकाशन ,यथार्थ और विकल्प : आत्महत्या-किसान , 19-पृष्ठ सं

4 गोंडवी अदम, समय से मुठभेड़, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, 2022, पृष्ठ सं- 96

5 वही पृष्ठ सं -72

6 चीमा बाली सिंह, ज़मीन से उठती आवाज़, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, 1990, पृष्ठ सं -63

7 कुमार अवनीश, पत्तों पर पाज़ेब, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली 2011, पृष्ठ सं- 27

8 सुगम महेश कटारे, आशाओं के नये महल, रश्मि प्रकाशन, कृष्णा नगर लखनऊ 2017, पृष्ठ सं -76

9 सुगम महेश कटारे, आवाज का चेहरा, रश्मि प्रकाशन, कृष्णा नगर लखनऊ 2015, पृष्ठ सं -32

10 इन्दौरी राहत, मेरे बाद, राधाकृष्ण प्रकाशन, जगतपुरी दिल्ली, 2021, पृष्ठ सं- 24

11 नूर मोहम्मद नूर, सफर कठिन है, प्रतिश्रुति प्रकाशन, कोलकाता, 2014, पृष्ठ सं- 46

12 यती ओम प्रकाश, कुछ नया मौसम तो हो, राधाकृष्ण प्रकाशन दरियागंज नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ सं -32

13 इन्दौरी राहत, चाँद पागल है, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, 2022, पृष्ठ 96

14 वशिष्ठ अनूप, गरम रोटी के ऊपर नमक तेल था, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ सं -55

****